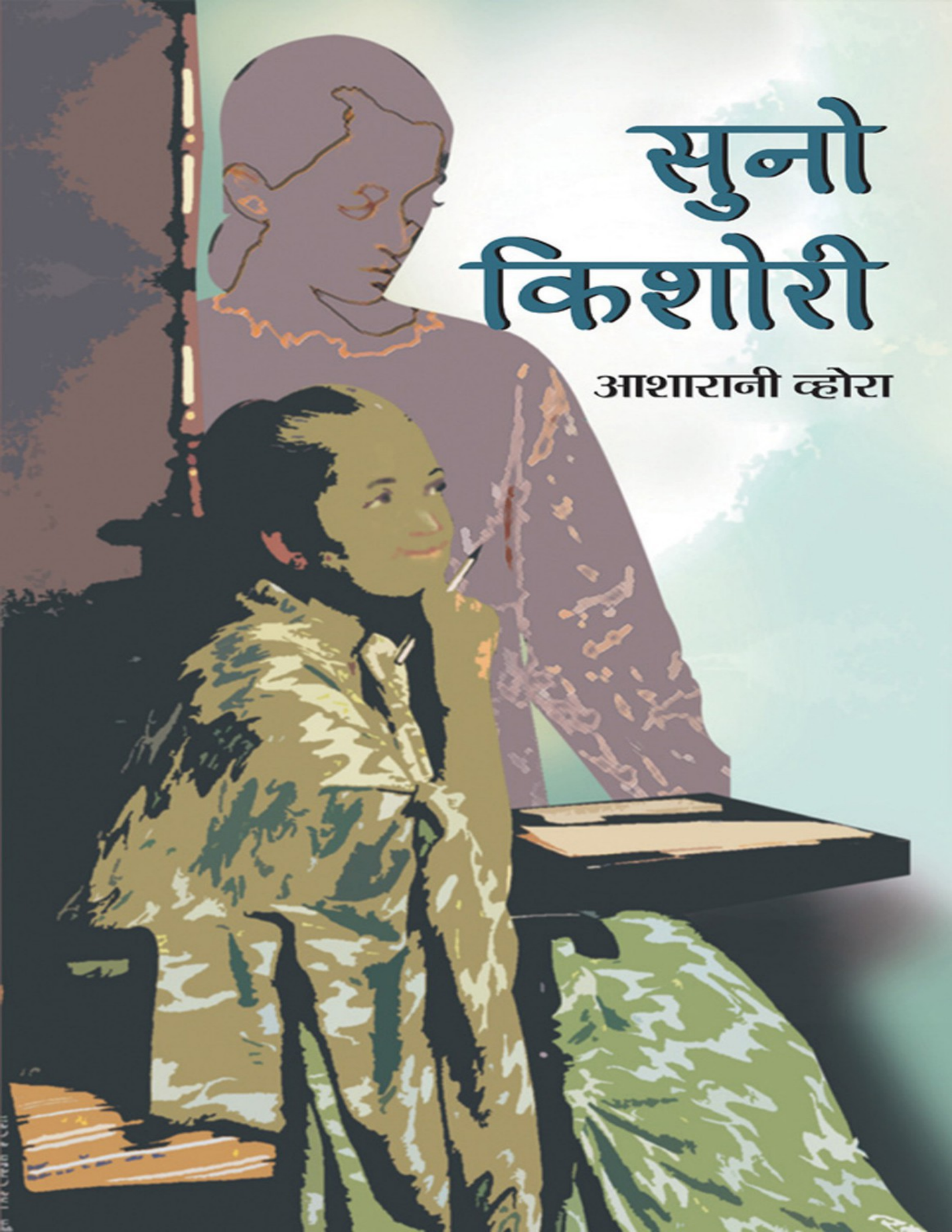

सुनो किशोरी

आशारानी व्होरा

सुनो किशोरी

आशारानी व्होरा

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001:2008 प्रकाशक

सभी आधुनिक किशोरियों को उनके सुखद भविष्य के लिए अर्पित

किशोरावस्था : जिंदगी की पहली पाठशाला

जिंदगी न काँटों का ताज है, न फूलों की सेज। वह एक समझौता है, उम्र भर की पाठशाला है। वह एक युद्धभूमि भी है, जहाँ जंग जीतने के लिए रोज-रोज कवायद करते सैनिक की तरह तैयार रहना होता है और वक्त पर हथियार भी सँभालने होते हैं। यही नहीं, शत्रु के किसी संभावित आक्रमण का सामना करने के लिए चौकन्ना व मुस्तैद भी रहना होता है।

जिंदगी की यह व्याख्या किशोरियों के मामले में विशेषकर लागू होती है।

किशोर उम्र लड़के-लड़कियाँ न बड़ों में, न छोटों में। छोटे बच्चों के साथ खेलें तो डाँट पड़े। बड़ों के बीच बैठकर उनकी बातें सुनें तो भी उन्हें वहाँ से डाँटकर उठा दिया जाता है। बेचारे किशोर समझ नहीं पाते कि ऐसा क्यों? नहीं समझ पाते, इसलिए प्राय: अपने भीतर उलझकर रह जाते हैं और अपने में ही खोए-खोए से नजर आते हैं—कभी गुमसुम, तो कभी गुस्से से फट पड़नेवाले तेवर।

लड़कों की अपेक्षा लड़कियाँ अधिक भावुक, अधिक कल्पनाशील और अधिक सृजनशील होती हैं। इस नाजुक उम्र में उन्हें कच्ची भावुकता से उबारने के लिए, उनकी कल्पना को साकार करने के लिए, उनके अनगढ़ सृजन को अभिव्यक्ति की राह देने के लिए उनपर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। दूसरी ओर ऊर्जा, उत्साह, उतावली से भरे उनके भाव-विह्वल मन में सपनों और अरमानों का जैसे सागर उमड़ता रहता है।

लेकिन घर-बाहर से उन्हें ऐसा वातावरण नहीं मिल पाता, जो उनकी कल्पना को राह दे, उनके सपनों को सृजनशीलता की धरती पर उतारने में उनकी मदद करे, उनके भीतर की सोई शक्ति को जगा सके, उनके बढ़ते कदमों को बाधित न करते हुए भी, उन कदमों को भटकने से बचाए, उन्हें दिशा दे। उन्हें प्रोत्साहित कर उनके भीतर आत्मविश्वास जगाए, भावी जिंदगी का सामना करने के लिए उन्हें तैयार करे।

आज की भागती, आपाधापीवाली जिंदगी में आगे बढ़ने के लिए प्रतियोगिता बेहद बढ़ गई है। पढ़ाई व कैरियर के साथ लड़कियों के पास घर के काम-काज के लिए समय का अभाव है। दूसरी ओर, संयुक्त परिवार नहीं है और घरेलू श्रम भी महँगा हो गया है। तब अपनी किशोरी बेटी को 'अपना हाथ जगन्नाथ' का गुर भी सिखाना होगा, उसे जिंदगी का पहाड़ा भी याद कराना होगा। सपनों की दुनिया से बाहर के कटु यथार्थ से भी उसे परिचित कराना होगा कि इस वय:संधिकाल में वह भावना के प्रवाह में बहकर अपनी अस्मिता के तटबंधों के प्रति बेखबर न रह जाए, बेपरवाह न हो जाए। निरर्थक रोक-टोक से दबी-सहमी या कुंठित होकर न रह जाए अथवा आक्रोशी बन विद्रोही तेवर न अपनाने लगे। स्वयं को उपेक्षित अनुभव कर कुछ सनसनीपूर्ण की तलाश में उसके कदम गलत राहों पर न भटक जाएँ। उसके भीतर कुछ बनने, कुछ कर दिखाने की तमन्ना जागे।

पाँच वर्ष तक के बच्चों को लाड़-प्यार की अधिक जरूरत होती है, यद्यपि यहाँ भी 'अति' से बचना होगा। आगे चौदह वर्ष की उम्र तक के बालक-बालिकाओं को जीवनोपयोगी जानकारियाँ देने व अनुशासन सिखाने के लिए प्यार व डाँट के बीच संतुलन साधना होता है। ग्यारह से पंद्रह वर्ष की नासमझ व अल्हड़ किशोरियों पर उनकी सुरक्षा व जीवनोपयोगी शिक्षा की दृष्टि से विशेष ध्यान देने और उनपर प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से निगाह रखने की भी जरूरत होती है, पर पंद्रह-सोलह की उम्र हो जाने पर लड़की से मित्रवत् व्यवहार ही करना चाहिए।

एक समझदार माँ उसके सामने सहेली की तरह प्रस्तुत होकर इस नाजुक उम्र में उसे अभयदान दे सकती है। उसे जिंदगी के प्रत्येक क्षेत्र का ज्ञान करा उसके भावी सुखद जीवन के लिए उसके व्यक्तित्व का स्वस्थ-संतुलित विकास कर सकती है।

इसके लिए लड़की के मन से 'स्त्रीत्व' का हीन भाव दूर करना होगा और उसके भीतर का सोया आत्मविश्वास भी जगाना होगा, जिससे आगे चलकर वह एक अच्छी पत्नी, सुघड़ गृहिणी और समझदार माँ बन सके। कामकाजी हो तो जिम्मेदार कर्मी और अच्छी सहकर्मी भी सिद्ध हो। लड़की से स्त्री बनने की प्रक्रिया के दौरान वह घबराए नहीं, इसके लिए उसे नारी-शरीर संबंधी जरूरी जानकारियाँ भी देनी होंगी, जिससे जिंदगी के हर मोड़ पर वह संवेदनशील क्षणों का दृढ़ता से सामना कर सके।

किशोर वय के इस विशेष प्रशिक्षण के लिए लड़की के साथ उसके स्तर पर उतरकर संवाद स्थापित करना होगा। उसके हृदय में झाँककर, मित्रवत् विश्वास में लेकर ही उसे उचित-अनुचित, करणीय-अकरणीय का बोध कराया जा सकता है। यदि हम ऐसा कर सकें तो हिम्मत व समझदारी की थाती लेकर वह अपनी जिंदगी की राह स्वयं चुन सकेगी और राह में आनेवाले कंटकों से अपना दामन भी बचाकर चल सकेगी।

भाग्य और पुरुषार्थ परस्पर पूरक हैं। अत: 'लड़की का भाग्य' कहकर उसे भाग्य के भरोसे या उसके हाल पर नहीं छोड़ देना है। एक भरी-पूरी जिंदगी जीने के लिए उसे तैयार करना माता-पिता, विशेष रूप से माँ, का नैतिक दायित्व है।

माताएँ अपनी इस जिम्मेदारी को बखूबी निभा सकें और किशोरियाँ अपने भावी जीवन की समुचित तैयारी के लिए इस पुस्तक से भरपूर लाभ उठा सकें, तो इसे लिखने का मेरा उद्देश्य व श्रम सार्थक होगा।

—आशारानी व्होरा

बी-२७ए, सेक्टर-१९,
नोएडा-२०१३०१

मेरी किशोरी पाठिकाओ,

तुम्हारे लिए यह पुस्तक लिखते समय मैं निरंतर तुम्हारे साथ रही हूँ। इस प्रक्रिया में मैंने तुम्हारे मन में उठती एक-एक लहर को गिना है, तुम्हारे एक-एक प्रश्न को तौलकर जाँचा-परखा है। मैं जानती हूँ, तुम इस समय किन प्रश्नों से घिरी हो, किन उलझनों में उलझी हो। उम्र के इस पड़ाव पर तुम्हारे भीतर बहुत से परिवर्तन हो रहे हैं—शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक। मानसिक-सामाजिक भय इसी उलझन की उपज हैं, जबकि तुम्हारी उम्र में यह उलझन स्वाभाविक है।

ऐसे समय, जबकि तुम बचपन को लाँघकर अल्हड़ किशोरी और किशोरी से सलोनी तरुणी बन रही हो, तुम्हारे भीतर ये परिवर्तन पहले की अपेक्षा अधिक तीव्र गति से हो रहे हैं। तेजी से हो रहे इन शारीरिक परिवर्तनों से तुम इस समय भयभीत हो। मासिकधर्म जैसी सहज प्राकृतिक बात से भी तुम्हें आघात पहुँचा है। अपने वक्ष की उठान को लेकर तुम शर्मिंदा हो, इसलिए उसे किसी तरह ढाँपकर छिपा लेना चाहती हो।

ये परिवर्तन तुम्हारे मन की दुनिया बदल रहे हैं—कभी तुम एकाएक प्रसन्नता से खिल उठती हो, कभी एकाएक आक्रोश से भरकर नाराज होने लगती हो। अपने भीतर की ऊर्जा से उत्तेजित होकर कभी तुम सबकुछ बदल डालना चाहती हो, फिर स्वयं को इसमें असमर्थ पाकर घर के हर सदस्य के हर काम में मीन-मेख निकालने लगती हो। कभी जोश से भरकर खूब काम करती हो, कभी सबकुछ छोड़कर सुस्त पड़ी रहना चाहती हो। अपने इन्हीं व्यवहारों का अर्थ जब तुम्हारी समझ में नहीं आता तो तुम्हारी खीझ और बढ़ जाती है— 'इस घर में कोई भी मुझे नहीं समझता।' या फिर भयभीत हो, तुम गुमसुम रहने लगती हो।

यों, मैं ठीक कह रही हूँ न? तुम मानोगी कि एकदम ऐसे नहीं तो इससे मिलती-जुलती स्थिति इस समय तुम्हारे मन की अवश्य है। तुम हैरान हो कि मैं तुम्हारे मन को कैसे पढ़ रही हूँ? तो सुनो, तुम्हारे लिए यह पुस्तक प्रस्तुत करने से पहले मैं विभिन्न पत्रिकाओं के माध्यम से तुम्हारी उम्र की लड़कियों के हजारों पत्रों से गुजरी हूँ। पाठकीय समस्याओं की स्तंभ-लेखिका के नाते तुम्हारी उम्र की समस्याओं से गहराई से परिचित हूँ। इसलिए इस पुस्तक के आगामी अध्यायों में तुम्हारे मन में उठनेवाले सभी प्रश्नों के उत्तर ईमानदारी से देने का प्रयास करूँगी।

उम्र पर तुम्हारा वश नहीं। तुम्हारे मन पर तुम्हारा पूरा अधिकार नहीं। अपनी समस्याओं और उनके समाधान के बारे में जानकारी न होना तुम्हारा दोष नहीं। हमारे समाज में किशोरियों को यह आवश्यक जानकारी न घरों से मिलती है, न स्कूलों से। शर्म और मर्यादा के कारण तुम अपनी समस्याओं पर अपनी माँ तक से खुलकर बात नहीं कर पाती हो। अपनी सहेलियों से तुम्हें जो अधूरी व अधकचरी जानकारी मिलती है, उससे तुम्हारी उलझन सुलझने के बजाय और बढ़ती ही है। प्रश्नों और जिज्ञासाओं से भरी इस उम्र में तुम्हारी तलाश एक ऐसे सच्चे मित्र की हो सकती है, जो तुम्हारे मन को समाधान की दिशा दे।

तुम्हारे लिए यह पुस्तक उसी सच्चे मित्र के अभाव की पूर्ति करेगी। एक किशोरी जब अपनी माँ से आमने-सामने प्रश्न कर समाधान पाने की हिम्मत नहीं जुटा सकती, अधिकतर माएँ भी जब अपनी इस जिम्मेदारी को गंभीरता से वहन नहीं करतीं, तब एक समझदार माँ द्वारा घर से बाहर हॉस्टल में रहनेवाली अपनी किशोरी बेटी को लिखे इन दोस्ताना पत्रों से तुम्हें उन सब प्रश्नों के उत्तर मिलेंगे, जो तुम्हें परेशान किए रहते हैं। तुम्हारे भावी जीवन की बुनियाद में यह पुस्तक कुछ उजली-मजबूत ईंटें लगा सकी तो मैं अपना प्रयास सार्थक मानूँगी।

—आशारानी व्होरा

ऐसा अवकाश आगे फिर कभी नहीं मिलेगा

सुनो सुगंधा,

तुमने लिखा है, कुछ दिन के लिए राहत महसूस की। छुट्टियों का आनंद लिया। पवन और प्राची के साथ खुशियाँ बाँट लीं; पर अब तुम बोर होने लगी हो, इसलिए जल्दी घर लौटना चाहती हो।

लेकिन क्यों?तुम इतनी जल्दी 'बोर' क्यों होने लगीं?

बेटी, तुम्हें इसीलिए तो मौसी के पास भेजा था कि इस परीक्षा के बाद तुम बेहद थक गई थीं और लगातार मेहनत के बाद तुम्हें कुछ दिन आराम और परिवर्तन चाहिए था। माध्यमिक परीक्षा और कॉलेज-प्रवेश के बीच एक लंबा अवकाश होता है। ऐसा अवकाश आगे जिंदगी में फिर कभी नहीं मिलता। मैं चाहती थी, इन लंबी छुट्टियों का तुम सदुपयोग कर सको। आराम और मनोरंजन के साथ कुछ नया करने, कुछ नया सीखने के लिए भी। ऐसा अवसर फिर तुम्हें कभी नहीं मिलेगा। इसके बाद तो कॉलेज की पढ़ाई, फिर कोई व्यावसायिक प्रशिक्षण, फिर नौकरी, फिर शादी, घर-गृहस्थी, बच्चों की जिम्मेदारियाँ। और गृहिणी, माँ, पत्नी के साथ एक कामकाजी नारी के रूप में तो जिम्मेदारियाँ-ही-जिम्मेदारियाँ।

हाँ बेटी, अब तुम बच्ची नहीं रहीं, यह अच्छी तरह समझती हो कि आज के वक्त में एक पढ़ी-लिखी महत्त्वाकांक्षी नारी के लिए ये दोहरी-तिहरी जिम्मेदारियाँ क्यों जरूरी हो गई हैं? इसीलिए मैंने कहा है कि चाहकर भी तुम आगे जीवन में ऐसा लंबा अवकाश नहीं पा सकोगी। अत: इसका भरपूर उपयोग करना है तुम्हें।

यही तो उम्र है, खा-खेलकर सेहत बनाने की। कुछ नया-नया सीखकर व्यक्तित्व निखारने की। सामान्य ज्ञान-विज्ञान की अच्छी-अच्छी पुस्तकें पढ़कर अपना आत्मविश्वास बढ़ाने की। व्यवहार के, रहन-सहन के तौर-तरीके सीखकर अपने आस-पास के लोगों में अपना प्रभाव बढ़ाने की। और इस तरह जीवन की सार्थकता की तलाश ही नहीं, उसकी उपलब्धि की भी संतुष्टि पाने की।

हाँ, **यही... बिलकुल यही वह समय है, जब किसी भी किशोरी के भावी जीवन का प्रतिमान तय होता है।** इसीलिए तो हाई स्कूल से निकली और कॉलेजों, ट्रेनिंग सेंटरों और रोजगार-साधनों के लिए प्रतीक्षारत किशोरियों के लिए इन लंबी छुट्टियों का खास महत्त्व है।

ये छुट्टियाँ तुम्हारे जीवन का एक महत्त्वपूर्ण मोड़ सिद्ध होंगी, यदि तुम इनका सही और सार्थक उपयोग कर सको। इसीलिए आजकल अनेक नगरों में इन छुट्टियों के दौरान अल्पावधि के विविध प्रशिक्षण कोर्स कराए जाते हैं। कई तरह की कार्यशालाएँ आयोजित की जाती हैं। पूर्व स्थापित प्रशिक्षण केंद्रों में भी ये लघु पाठ्यक्रम या कार्यशालाएँ आयोजित होती हैं कि जो लड़कियाँ पूरे कोर्स नहीं कर सकतीं, वे लंबी छुट्टियों में इनका लाभ ले सकें। इस तरह लड़कियाँ हर बार ग्रीष्मकालीन लंबे अवकाश में एक-एक शॉर्ट कोर्स करके स्नातक बनने तक न जाने कितने तरह के उपयोगी प्रशिक्षण ले लेती हैं और फिर इन सबके लिए अलग से समय व श्रम न लगाकर पढ़ाई समाप्ति तक अनेक व्यक्तित्व-गुणों से परिपूर्ण हो चुकी होती हैं।

मैंने तुम्हें जहाँ भेजा है वहाँ महानगर में इन दिनों जगह-जगह ऐसे लघु पाठ्यक्रमों की सुविधा उपलब्ध है। ये अधिकतर हॉबी कक्षाएँ ही होती हैं—बॉडी लाइन ऐंड ब्यूटी, इंटीरियर डेकोरेशन, पेंटिंग, बूटीक, सिलाई-कढ़ाई, ड्रेस डिजाइनिंग, फैशन डिजाइनिंग, पेपरमेशी, डाल मेकिंग, इंडियन ऐंड कॉटीनेंटल कुकरी, बेकरी, कैटरिंग, बागबानी, फ्लावर अरेंजमेंट आदि। फिर रोजगारोन्मुख शॉर्ट कोर्स भी होते हैं—टाइपिंग, शॉर्टहैंड, बुक-कीपिंग, सर्वेयर, इनवेस्टीगेटर, कंप्यूटर ऑपरेटर, प्रिंटिंग आदि। कौन सा कोर्स नए सीखनेवालों के लिए है, कौन सा अगली ट्रेनिंग, जैसे—सिलाई-कढ़ाई के बाद ड्रेस डिजाइन या फैब्रिक पेंटिंग के बाद कैनवास पेंटिंग या ऑयल पेंटिंग आदि के लिए, इसका चुनाव अपनी जरूरत के अनुसार करना होता है। इस तरह एक ग्रीष्मकालीन अवकाश में बुनियादी प्रशिक्षण ले लिया जाता है, अगली बार उसी कला में अगले स्तर का प्रशिक्षण और ये सारे लाभ पढ़ाई के साथ ही मिलते रहते हैं।

फिर शहरों में अच्छे पुस्तकालय हैं, जहाँ से पढ़ने के लिए अपनी पसंद व उपयोगिता की सभी पुस्तकें बारी-बारी से लाकर उनका लाभ उठाया जा सकता है। यदि कोई लड़की सस्ते किस्म के कहानी-किस्से, रोमानी उपन्यास या फिल्मी साहित्य ही न लाकर पुस्तकालय का अच्छा उपयोग कर सके तो समय का सदुपयोग करके स्वस्थ मनोरंजन पा सकेगी और अपना आत्म-विकास भी कर सकेगी, जो आत्मविश्वास बढ़ाने में सहायक होगा। **कोर्स की पढ़ाई के बाद थकान उतारने के लिए हलका-फुलका मनोरंजनक साहित्य पढ़ने में भी हर्ज नहीं, पर उसका चस्का नहीं लगना चाहिए कि फिर अच्छी पुस्तकों का चयन ही न कर सकें और उनके लाभ से वंचित रह जाएँ।** वापस अच्छी पुस्तकें पढ़ने में मन लगे और अगली कैरियर-पढ़ाई के लिए शक्ति जुट सके, बस हलके मनोरंजक साहित्य का उपयोग इतना ही होता है। जैसे परीक्षा की थकान उतारकर वापस तरोताजा होने के लिए बीच में कोई अच्छी पिक्चर देख ली।

इन दिनों प्राची और पवन की भी तो छुट्टियाँ हैं। तुम उनके साथ कभी पिकनिक पर जाओ, कभी पिक्चर देखो। सुबह सैर-व्यायाम के लिए निकलो। योग कक्षा जॉइन कर लो। दोपहर में घर बैठकर कैरम या ताश खेलो।

कोई भी मनपसंद काम करो। पर याद रखो, निरा मनोरंजन भी कुछ दिन बाद निरर्थकता का अहसास देता है, इसलिए ऊब पैदा करता है। तुम्हारा यह वाक्य 'मैं बोर हो रही हूँ' इसी निरर्थकता-अहसास की उपज है, अन्यथा संगी-साथियों के साथ खेल-मनोरंजन में, कुछ मनपसंद कामों में समय बिताने में, कुछ हॉबियाँ अपनाने, कुछ नया सीखने-करने में बोरियत का क्या काम?

मनोरंजन के साथ कुछ सार्थक भी करने को मिले तो कभी बोरियत नहीं होती। हम कुछ कर रहे हैं। कुछ नया सीखकर अपने में भर रहे हैं। सार्थकता का यह अहसास ही मन में आत्मविश्वास भरता है। इसी से व्यक्तित्व का निर्माण होता है। यही तो समय है व्यक्तित्व-निर्माण का और इस निर्माण-प्रक्रिया में सार्थकता के अहसास का। तब बोर होने का सवाल ही पैदा नहीं होता। बस सोच में बदलाव पैदा करो, फिर सबकुछ ठीक लगेगा।

यों इस बोरियत के लिए दोषी तुम नहीं, तुम्हारी उम्र है। किशोरावस्था से तरुणाई की ओर आते समय भीतरी हारमोनल परिवर्तन से कदम कुछ ठिठकते ही हैं। ढेर-ढेर सपने देखने की इस उम्र में भविष्य की इतनी सारी योजनाएँ होती हैं कि आकांक्षाएँ उनमें से अपनी राह आसानी से नहीं निकाल पातीं। इसलिए मन उलझ-उलझ जाता है। आकांक्षाएँ अकेली नहीं होतीं, उनके साथ आशंकाएँ भी हमजोली की तरह लगी होती हैं। यथार्थ से टकराहट को लेकर एक अनजाना भय मन में समाया रहता है। आजादी की चाह और सुरक्षा के लिए रोक-टोक। अनुभवजन्य अहसास और आशंकाएँ, इसलिए बढ़ते कदम रह-रहकर ठिठकने लगते हैं।

तुम्हें समझना है सुगंधा, कि आगे बढ़ने के लिए ये ठहराव भी सहायक सिद्ध होते हैं, इसलिए जरूरी भी होते हैं। **यदि अनिश्चय-अनिर्णय के इन ठहरे क्षणों को 'बोरियत' का नाम देकर उसके हवाले न कर दिया जाए तो ये अस्थायी ठहराव रुक-रुककर, ठहर-ठहरकर आगे बढ़ने में बहुत मदद करते हैं। सोच-सोचकर उठाए गए कदम होते हैं ये, इसलिए किशोर कदम लड़खड़ाने से, भटकने से बच जाते हैं।** पर ठहरावों का अर्थ स्थिरता नहीं होता। किशोर कदम कभी भी स्थिरता सहन नहीं करते, उन्हें गति चाहिए। इसलिए ठहरावों का मतलब केवल यही है कि देखें-सोचें। एक राह ठीक न लगे तो राह बदल लें, नई राह चुन लें।

तो अनिश्चय या अनिर्णय के इन ठहरावों में मैं तुम्हें सहारा तो देना चाहूँगी, सहानुभूति नहीं। सहारा भी इतना ही कि इसके लिए बढ़े हुए मेरे हाथ तुम्हें कसने न लगें। तुम्हारी गति में बाधक न बनने लगें, इसीलिए मैं तुम्हें दिशा तो दे सकती हूँ, राह नहीं। राह तुम्हें स्वयं ही खोजनी है। खोजो और हँसी-खुशी उसपर बढ़ चलो।

एक कहावत है—'खाली दिमाग शैतान का घर'। बस, इसे ही याद रखो और निर्माण की इस उम्र में कभी खाली मत रहो। इस समय तुम्हारे भीतर इतनी ऊर्जा है कि तुम बहुत कुछ सीखकर, बहुत कुछ करके उसे राह दे सकती हो। यह सीखना, कुछ करना जितना सार्थक होगा, तुम्हारा भविष्य उतना ही उज्ज्वल होगा।

तो अगले पत्र में मैं तुमसे 'बोर हो रही हूँ'—यह सुनने के बजाय, यह जानना चाहूँगी कि तुम अपनी छुट्टियाँ किस तरह बिता रही हो?क्या पढ़ रही हो?क्या सीख रही हो?क्या कर रही हो? जब तुम्हारे 'शॉर्ट हॉबी-कोर्स' पूरे हो जाएँ तो लिखना, मैं तुम्हें बुलवा लूँगी। अभी तो मैं तुम्हें एक जिंदादिल, खुशमिजाज, ऊर्जावान् लड़की की तरह कुछ करते हुए, आगे बढ़ते देखना चाहती हूँ, 'बोर' होते हुए नहीं—समझीं!

—तुम्हारी माँ

❑

जीवन के प्रत्येक मोड़ पर ऐसा होता है

सुनो सुगंधा!

तुम्हें कॉलेज में प्रवेश लिये लगभग तीन सप्ताह होने को आए। मुझे लगता है, जैसे तीन वर्ष बीत गए हों। जानती हूँ, हर माँ को अपने बच्चों को पाल-पोसकर बड़ा करके अपने से दूर करना पड़ता है। अभी तुम पढ़ाई के लिए अलग हुई हो, फिर विवाह करके अलग घर बसाओगी। पर माँ का हृदय है न! वह यह सब तर्क कहाँ सुनता है!

न सुने। मैं उसे सुनाऊँगी। माँ की ममता कितनी भी कमजोर हो, अपने जिगर के टुकड़ों की राह का रोड़ा नहीं बन सकती। उनके सुंदर भविष्य की राह पर दीपक ही जला सकती है। फूलों की सुगंध की तरह अपने प्यार का सौरभ ही बिखेर सकती है। और...

छोड़ो। यह बताओ, इन तीन सप्ताहों में कुल दो ही पत्र क्यों?वह भी एक तो पहुँचने के कुशल-मंगल का। दूसरा, 'ठीक हूँ, पढ़ाई ठीक चल रही है' तक सीमित और बँधा-घुटा सा?इतने दिन मेरे साथ बिताकर अभी भी क्या तुम मुझे परंपरा से बँधी एक साधारण माँ ही समझती हो, जो केवल आशीर्वाद दे सकती है,उपदेश दे सकती है, डाँट लगा सकती है—और पहरा बिठा सकती है? क्या तुम मुझे माँ के साथ अपनी एक सहेली नहीं समझती, जो हर खुशी में, हर चिंता में तुम्हारा साथ दे सके, तुम्हारे मन का बोझ हलका कर सके और जरूरत पड़ने पर तुम्हें निर्देश भी दे सके।

जैसा कि मैंने तुम्हें पूर्व पत्र में संकेत किया था, यह पत्र मैं तुम्हें उस 'शुभचिंतक सहेली' के नाते ही लिख रही हूँ। उन्हीं आँखों से देख रही हूँ कि तुम अपने इस नए परिवेश में खुश हो, बहुत खुश नजर आ रही हो, पर भीतर-ही-भीतर तुम्हें कुछ कचोट भी रहा है, जिसे छिपाने के प्रयत्न में कभी तुम उँगलियाँ चटखाती हो, कभी चुन्नी की कोर उमेठती हो। कभी जोर से हँसकर सहसा गंभीर होने लगती हो, तो कभी तेज-तेज चलती हुई सहसा ठिठककर कुछ सोचने लगती हो।

यह भी हो सकता है कि संध्याओं में कभी एकांत खोजकर तुम आकाश को अपलक निहारने लगो या स्वयं से ही पहेलियाँ बुझाती रहो और कुछ भी समझ न पाओ। मतलब कि मैं इतनी दूर से भी तुम्हें देख रही हूँ। शायद एक सहेली माँ की आँखें ही यह सब देख सकती हैं।

हाँ, मैं देख रही हूँ कि तुम सबके बीच अकसर 'नर्वस' होने लगती हो और एकांत में उदास हो जाती हो। तुम्हारी आँखों की पुतलियों में उल्लास की चमक है तो उनकी कोरों में भय की एक क्षीण रेखा भी। तुम्हारे पैरों में गति है, आगे बढ़ने का उत्साह है तो उसके साथ एक अनजाना कंपन भी है, जिसे तुम महसूस कर रही हो और मैं देख रही हूँ। इतनी दूर से भी तुम्हारा अध्ययन कर रही हूँ।

तुम्हें भी लग रहा है न कि मैं ठीक देख रही हूँ और तुम्हारे मन की बात पकड़ रही हूँ? तो सुनो, जीवन के प्रत्येक मोड़ पर ऐसा होता है—किशोरावस्था के इस मोड़ पर तो अवश्य ही। और जो कुछ मैंने तुम्हें अभी बताया है, उससे अधिक ही होता है।

एक लड़की के कॉलेज-प्रवेश का अर्थ है, भविष्य की नई दिशा पकड़ना। इसमें नई राहों की तलाश की पुलक है, तो कदमों के भटक जाने का डर भी। एक-एक मोड़ ऐसा है, जहाँ से किशोरी तरुणी बनकर नए जीवन में प्रवेश करती है। प्रवेश-द्वार की इस दहलीज पर उसके पाँव सहसा ठिठकने लगते हैं।

क्यों भला?

इसलिए कि वह अनुभवहीनता और नवयौवन के नए अनुभवों के बीच, सही और गलत के बीच, उचित और अनुचित के बीच, सम्मान और असम्मान के बीच फँसकर स्वयं को तौलने लगती है। कच्चे मन की सोंधी माटी को मानसिक परिपक्वता की भट्ठी में पकाकर व्यक्तित्व का सुंदर-सुघड़ घट प्राप्त करने का प्रयत्न करती है।

पर यहाँ से मंजिल अभी बहुत दूर होती है, इसलिए मंजिल की पहचान भी मुश्किल होती है। पहचान न हो पाना स्वाभाविक है, बेहद स्वाभाविक; पर मंजिल पाने के लिए छटपटाहट है—इतना काफी है। लक्ष्य की पहचान इसी छटपटाहट में से गुजरकर धीरे-धीरे हो पाती है। यहीं...हाँ, यहीं पर कुछ लड़कियाँ लड़खड़ा जाती हैं और लक्ष्य उनके हाथ से छूट जाता है, जबकि दूसरी संतुलन साधती हुई आगे बढ़कर लक्ष्य को पाने में सफल हो जाती हैं।

मैं चाहती हूँ, तुम्हें लड़खड़ाने न दूँ। जहाँ ऐसी आशंका हो, आगे बढ़कर तुम्हारा हाथ थाम लूँ। इसलिए यदि तुम चाहती हो कि निश्चिंत होकर अपनी पढ़ाई में मन लगा सको तो अपनी हर बात, हर उलझन, हर गतिविधि और उसमें आनेवाली हर बाधा मुझे लिख भेजा करो—खुलकर, निस्संकोच।

विश्वास रखो, मैं एक समझदार अंतरंग सहेली की तरह तुम्हारी हर बात सुनूँगी। हर खुशी, हर गतिविधि में तुम्हारे साथ रहूँगी। हर समस्या में तुम्हारे संघर्ष की भागीदार बनूँगी, तो माँ के रूप में उन समस्याओं और उलझनों से निकालने के लिए तुम्हारा पथ-प्रदर्शन भी कर सकूँगी। मैं चाहती हूँ, अभी तक जिसे तुमने केवल माँ

समझा, आगे से उसमें अपनी सहेली का रूप भी मिला लो। तब तुम्हें मेरे सामने अपने मन की गाँठें खोलने में कोई संकोच नहीं होगा।

लिखना, क्या तुम्हें मेरा सुझाव पसंद आया?और क्या तुम समय-समय पर अपने पत्रों में अपने मन को उड़ेलने का आत्मबल जुटाओगी? यह मेरा आदेश नहीं, आग्रह है।

आदेश और आग्रह का अंतर समझती हो न? तो अपनी पढ़ाई के साथ हॉस्टल के, कॉलेज के अपने सहपाठियों के समाचार भी देना।

—तुम्हारी माँ

❑

यह भागकर आना क्या, पगली!

सुनो सुगंधा!

तुम्हारा पत्र कल मिला। तुमने मेरे प्रस्ताव को पसंद किया है, यह जानकर खुशी हुई। आखिर बेटी किसकी हो! पर यह जो तुमने लिखा है, 'माँ, कॉलेज में सब अच्छा लगता है, बहुत अच्छा, फिर भी न जाने क्यों, कभी-कभी मन बहुत उखड़ा-उखड़ा सा हो आता है। उस समय लगता है, भागकर तुम्हारे पास पहुँच जाऊँ।'

पगली कहीं की! यह भागकर आना क्या? यही तो मैं चाहती हूँ कि जब ऐसा लगे, तुम मुझे पत्र लिखो और जो मन में आए, खुलकर लिखो। फिर देखो, मन हलका होता है कि नहीं।

सुन बेटी! एक होता है किताबी ज्ञान, एक व्यावहारिक ज्ञान। हर छात्रा को ज्ञान की इन दोनों राहों से गुजरना होता है। पर कॉलेज-जीवन एक ऐसा स्थल है, जहाँ ये दोनों राहें आकर मिल जाती हैं। अब यह लड़की की 'एप्रोच' पर निर्भर है कि वह इस ज्ञान-संगम से क्या, कितना लाभ उठा पाती है?

इस अवधि में जो लड़की पुस्तकीय ज्ञान और व्यावहारिक अनुभव में जितना तालमेल बैठा पाती है, उसके भावी जीवन की सफलता उतनी ही निश्चित हो जाती है। यहाँ चूक जाने का अर्थ है, विकास में पिछड़ जाना और फिर इसके लिए जीवन भर पछताना।

पुस्तकों से जितना प्राप्त होता है, उससे अधिक मिलता है संपर्क में आनेवाले व्यक्तियों, गुरुओं और संगी-साथियों से। यह आदान-प्रदान जितना स्वस्थ होगा, जीवन उतना ही ऊँचा उठेगा। इसलिए लड़कों से मिलते समय न तो उनसे डरने की आवश्यकता है, न छुई-मुई बनने की। उन्हें हौवा या अजूबा न समझ, अपने जैसा ही इनसान समझो और केवल सहपाठी मानकर उनसे मित्रवत् सहज बरताव रखो तो तुम पाओगी कि लड़के उतने बुरे नहीं होते, जैसा कि अकसर लड़कियाँ उन्हें समझती हैं और उनसे भय खाती हैं।

वास्तव में यह भय उनके अपने मन में ही होता है। जिन्हें स्वयं पर विश्वास नहीं होता, वे ही प्रायः लड़कों को अविश्वास की नजर से देखती हैं। गुंडा किस्म के लड़कों की बात अलग है, उनके संपर्क से बचने में ही भलाई है। पर हर नवयुवक को इस दृष्टि से देखना उनके साथ अन्याय करना है और स्वयं में एक अस्वस्थ दृष्टिकोण का विकास करना है। तुम सभी लड़कों को शक की नजर से न देख, स्वयं में आत्मविश्वास पैदा करो और जहाँ भय सताए, मुझे लिख भेजो। तुम पाओगी, तुम्हें किसी से भय नहीं है।

इस तरह सहज मानवीय दृष्टिकोण लेकर तुम हर किसी से बहुत कुछ सीख सकोगी—लड़कियों से भी, लड़कों से भी।

मेरे खयाल में, अब तुम्हें ऐसा नहीं लगेगा कि भागकर माँ के पास चली जाऊँ। यह असुरक्षा की भावना आत्मविश्वास की कमी की ही निशानी है। धीरे-धीरे तुम इसपर विजय पा सकोगी, ऐसा मुझे विश्वास है।

एक बात और, कभी भी डिग्री-मूल्य और जीवन-मूल्य को एक समझ लेने की भूल न करना। जानती हूँ, कैरियर की दृष्टि से आज डिग्री का ही मूल्य है, जिसके साथ सामाजिक सम्मान भी जोड़ लिया गया है। पर सच मानो, इससे अधिक सामान्य जीवन में इसकी कोई विशेष उपयोगिता नहीं। जीवन-मूल्य अपनी जगह है, डिग्री-मूल्य अपनी जगह। इन्हें मिलाकर देखना ठीक नहीं।

पर इसका यह मतलब नहीं कि इन्हें अलग-अलग समय में प्राप्त किया जा सकता है। बेशक जीवन-मूल्यों को पाने के लिए पूरा जीवन पड़ा है, जबकि डिग्री इस थोड़े से समय में ही ली जाती है। पर यह सीमित अवधि वह अवधि है, जहाँ एक लड़की के जीवन-मूल्य सर्वाधिक निर्धारित होते हैं। यहाँ उसे बहुत तीव्र गति से दोनों को एक साथ पकड़ना होता है। इस तेज रफ्तार में ठहरकर सोचने का समय बहुत कम होता है, इसलिए भूलें हो सकती हैं।

लेकिन भूलें होना स्वाभाविक है, अनिवार्य नहीं। सावधानी से चलें तो बखूबी इनसे बचा जा सकता है।

हाँ, सुगंधा, यही वह आयु है, जब मन-मस्तिष्क के विकास की प्रक्रिया सबसे अधिक तेज होती है। तीव्र प्रक्रिया में निर्णय भी जल्दी-जल्दी लेने होते हैं। सूझ-बूझ, साहस और कुशलता से ही सही निर्णय लिये जा सकते हैं। व्यक्तित्व का निर्माण इस उम्र के निर्णयों पर ही निर्भर करता है।

पुस्तकों से, महापुरुषों की जीवनियों से जो प्रेरणा मिलती है, उससे अधिक प्रेरणा मिलती है उन व्यक्तियों से, जो हमारे संपर्क में आकर अपने आचार-विचार-व्यवहार से हमारे निर्णयों को प्रभावित करते हैं। हमारी कोशिश होनी चाहिए कि हम सभी की बात सुनें, सभी से कुछ-न-कुछ सीखें और इससे अपने दृष्टिकोण को व्यापक बनाएँ। सबसे कटकर, अलग-थलग रहकर यह नहीं हो सकता।

कहीं तुम्हें यह तो नहीं लग रहा है कि यहाँ मैं फिर उपदेश देनेवाली माँ बन गई हूँ? नहीं सुगंधा, मैं तो तुम्हारे साथ विचारों के आदान-प्रदान का रास्ता खोलना चाहती हूँ। यदि तुम खुलकर अपनी बात मुझसे कहती चलो और इस तरह अपनी मानसिक गुत्थियों को सुलझाती चलो, तो तुम अधिक निश्चिंत होकर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ सकोगी। फिर भी सहेली से बढ़कर यदि माँ रूप में मैं तुम्हें कुछ निर्देश दे सकी हूँ तो इतना तो अधिकार तुम मुझे दोगी ही।...दोगी न?

—तुम्हारी माँ

❑

उड़ो, पर धरती पर निगाह रखकर

सुनो सुगंधा! तुम्हारा पत्र पाकर खुशी हुई। तुमने दोतरफा अधिकार की बात उठाई है, वह पसंद आई। बेशक, जहाँ जिस बात से तुम्हारी असहमति हो वहाँ तुम्हें अपनी बात मुझे समझाने का पूरा अधिकार है। मुझे खुशी ही होगी, तुम्हारे इस अधिकार-प्रयोग पर। इससे राह खुलेगी और खुलती ही जाएगी। जहाँ कहीं कुछ रुकती दिखाई देगी वहाँ भी परस्पर आदान-प्रदान से राह निकाल ली जाएगी। अपनी-अपनी बात कहने-सुनने में बंधन या संकोच कैसा?

मैंने तो अधिकार की बात यों पूछी थी कि मैं उस बेटी की माँ हूँ, जो जीवन में ऊँचे उठने के लिए बड़े ऊँचे सपने देखा करती है आकाश में अपने छोटे-छोटे डैनों को चौड़े फैलाकर।

धरती से बहुत ऊँचाई में फैले इन डैनों को यथार्थ से दूर समझकर भी मैं काटना नहीं चाहती। केवल उनकी डोर मजबूत करना चाहती हूँ कि अपनी किसी ऊँची उड़ान में वे लड़खड़ा न जाएँ। इसलिए कहना चाहती हूँ कि 'उड़ो बेटी, उड़ो, पर धरती पर निगाह रखकर।' कहीं ऐसा न हो कि धरती से जुड़ी डोर कट जाए और किसी अनजाने-अवांछित स्थल पर गिरकर डैने क्षत-विक्षत हो जाएँ। ऐसा नहीं होगा, क्योंकि तुम एक समझदार लड़की हो। फिर भी सावधानी तो अपेक्षित है ही।

यह सावधानी का ही संकेत है कि निगाह धरती पर रखकर उड़ान भरी जाए। उस धरती पर, जो तुम्हारा आधार है—तुम्हारे परिवेश का, तुम्हारे संस्कार का, तुम्हारी सांस्कृतिक परंपरा का, तुम्हारी सामर्थ्य का भी आधार जुड़ा होना चाहिए उसमें। हमें पुरानी जर्जर रूढ़ियों को तोड़ना है, अच्छी परंपराओं को नहीं।

परंपरा और रूढ़ि का अर्थ समझती हो न तुम? नहीं, तो इस अंतर को समझने के लिए अपने सांस्कृतिक आधार से संबंधित साहित्य अपने कॉलेज-पुस्तकालय से खोजकर लाना, उसे जरूर पढ़ना। यह आधार एक भारतीय लड़की के नाते तुम्हारे व्यक्तित्व का अटूट हिस्सा है, इसलिए।

बदले वक्त के साथ बदलते समय के नए मूल्यों को भी पहचानकर हमें अपनाना है। पर यहाँ 'पहचान' शब्द को रेखांकित करो। बिना समझे, बिना पहचाने कुछ भी नया अपनाने से लाभ के बजाय हानि उठानी पड़ सकती है।

पश्चिमी दुनिया का हर मूल्य हमारे लिए नए मूल्य का पर्याय नहीं हो सकता। हमारे बहुत से पुराने मूल्य अब इतने टूट-फूट गए हैं कि उन्हें भी जैसे-तैसे जोड़कर खड़ा करने का मतलब होगा, अपने आधार को कमजोर करना। या यूँ भी कह सकते हैं कि अपनी अच्छी परंपराओं को रूढ़ि में ढालना।

समय के साथ अपना अर्थ खो चुकी या वर्तमान प्रगतिशील समाज को पीछे ले जानेवाली समाज की कोई भी रीति-नीति रूढ़ि है, समय के साथ अनुपयोगी हो गए मूल्यों को छोड़ती और उपयोगी मूल्यों को जोड़ती निरंतर बहती धारा परंपरा है, जो रूढ़ि की तरह स्थिर नहीं हो सकती।

यही अंतर है दोनों में। रूढ़ि स्थिर है, परंपरा निरंतर गतिशील। एक निरंतर बहता निर्मल प्रवाह, जो हर सड़ी-गली रूढ़ि को किनारे फेंकता और हर भीतरी-बाहरी, देशी-विदेशी उपयोगी मूल्य को अपने में समेटता चलता है। इसीलिए मैंने पहले कहा है कि अपने टूटे-फूटे मूल्यों को भरसक जोड़कर खड़ा करने से कोई लाभ नहीं, आज नहीं तो कल, वे जर्जर मूल्य भरभराकर गिरेंगे ही।

इसी तरह पश्चिमी मूल्य भी, जो हमारी धरती के अनुकूल नहीं है, ज्यों-के- त्यों यहाँ नहीं उगाए जा सकते। उगाएँगे, तो वे पौधे फलीभूत नहीं होंगे। होंगे, तो जल्दी झड़ जाएँगे, वे फल हमारे किसी काम के नहीं होंगे।

मुझे लगता है, पत्र का यह अंश आज तुम्हारे लिए कुछ भारी हो गया। बेहतर है, अपनी संस्कृति व परंपरा को ठीक से समझने के लिए फुरसत के समय इससे संबंधित साहित्य पढ़ना। इसलिए कि यह बुनियादी जानकारी हर भारतीय लड़की के लिए जरूरी है, जिससे वह अपनी धरती, अपनी जड़ों को अच्छी तरह पहचान सके।

यहाँ तुम्हारी सहेली रचना के संदर्भ में यह प्रसंग इसलिए कि वह इस सीमा-रेखा को नहीं समझ पा रही। एक रचना का ही संघर्ष नहीं है यह, एक पूरी पीढ़ी का संघर्ष है। नई पीढ़ी पुराने मूल्यों को तो काट फेंकना चाहती है, पर नए मूल्यों के नाम पर केवल पश्चिमी मूल्यों को ही जानती-पहचानती है। कहें, उधार लिये मूल्यों से ही काम चला लेना चाहती है। नए मूल्यों के निर्माण का दम-खम अभी उसमें नहीं आया है।

सुनो, नए मूल्यों का निर्माण करना है तो नए ज्ञान-विज्ञान को पहले अपनी धरती पर टिकाना होगा। अपनी सामर्थ्य और अपनी सीमाओं में से ही उसकी पगडंडी काटनी होगी। यह पगडंडी काटने का साहस ही पहले जरूरी है, नई चौड़ी राह उसी में से खुलती दिखाई देगी।

तुम अपनी सहेली रचना को यह समझाओ कि क्रांति की बड़ी-बड़ी बातें करना आसान है, कोई छोटी सी क्रांति भी कर दिखाना कठिन। और एक ही झटके में यूँ टूट-हारकर बैठ जाना तो निहायत मूर्खता है। फिर अभी तो वह प्रथम वर्ष के पूर्वार्ध में ही है। अभी से उसे ऐसा कोई कदम नहीं उठाना चाहिए। जरूरी हो तो सोच-समझकर वे अपनी दोस्ती को आगे बढ़ा सकते हैं।

कॉलेज-जीवन की पूरी अवधि में वे निकट मित्रों की तरह रहकर एक-दूसरे को देखें-जानें, जाँचे-परखें। एक-दूसरे की राह का रोड़ा नहीं, प्रेरणा और ताकत बनकर परस्पर विकास के सहभागी बनें। फिर अपनी पढ़ाई की समाप्ति पर भी यदि वे एक-दूसरे के साथ पूर्ववत् लगाव महसूस करें, उन्हें लगे कि निकट रहकर सामने आई कमियों-गलतियों ने भी उनकी दोस्ती में कोई दरार नहीं डाली है, तो वे एक-दूसरे को, उनकी समस्त खूबियों-कमियों के साथ, स्वीकार कर अपना लें। उस स्थिति में की गई यह कथित क्रांति न कठिन होगी, न असफल।

मेरी राय में रचना को और उसके दोस्त को तब तक धैर्य से प्रतीक्षा करनी चाहिए। इस बीच वे पूरे जतन के साथ एक-दूसरे के लिए स्वयं को तैयार करें। बिना तैयारी के जल्दबाजी में, पढ़ाई के बीच, शादी का निर्णय लेना केवल बेवकूफी ही कही जा सकती है, क्रांति नहीं। ऐसी कथित क्रांति का असफल होना निश्चित ही समझना चाहिए। इतनी जल्दबाजी में तो किसी छोटे से काम के लिए उठाया कोई छोटा कदम भी शायद ही सफल हो। यह तो जिंदगी का अहम फैसला है।

मैं समझती हूँ, रचना की इस मूर्खतापूर्ण 'क्रांति' में उसकी सहायता न करने का तुम्हारा निर्णय एक सही निर्णय है, पर तटस्थ रहना ही काफी नहीं है। यदि रचना सचमुच तुम्हारी प्यारी सहेली है तो उसका हित-अहित देखना भी तुम्हारा काम है, उसमें हस्तक्षेप करना भी।

पर रचना को इसके लिए दोष देने व उसकी भर्त्सना करने से भी बात नहीं बनेगी, बिगड़ जरूर सकती है। हो सकता है, कथित प्यार के जुनून में इसका उलटा असर हो और वह तुम्हारी बात का बुरा मानकर तुमसे कन्नी काटने लगे। इसलिए सँभलकर बात करनी होगी और सूझबूझ से बात सँभालनी होगी।

दोष अकेली रचना का है भी नहीं। दोष उसकी नासमझ उम्र का है या उसके उस परिवेश का है, जिसमें उसे सँभलकर चलने के संस्कार नहीं दिए गए। यह उम्र ही ऐसी है, जब कोई भावुक किशोरी किसी युवक की प्यार भरी मीठी-मीठी बातों के बहकावे में आकर उसे अपना सबकुछ समझने लगती है और कच्ची रोमानी भावनाओं में बहकर जल्दबाजी में आत्मसमर्पण तक करने की मूर्खता कर बैठती है। पछतावा उसे तब होता है जब पानी सर से गुजर चुका होता है।

इस अल्हड़ उम्र में अगर वह लड़की अपने परिवार के स्नेह-संरक्षण से मुक्त है, आजादी के नाम पर स्वयं को जरूरत से ज्यादा अहमियत देकर अंतर्मुखी हो गई है तो उसके फिसलने की संभावना अधिक बढ़ जाती है। अपने में अकेली पड़ गई लड़की जैसे ही किसी लड़के के संपर्क में आती है, उसे अपना हमदर्द समझ बैठती है और उसके बहकने की, उसके कदम भटकने की संभावना और भी बढ़ जाती है। लगता है, अपने परिवार से कटी रचना के साथ ऐसा ही है। यदि सचमुच ऐसा है तो तुम्हें और भी सावधानी से काम लेना होगा, अन्यथा उसे समझाना मुश्किल होगा, उलटे तुम्हारी दोस्ती में दरार आ सकती है।

एक अच्छी सहेली के नाते तुम उसकी पारिवारिक पृष्ठभूमि का अध्ययन करो। अगर लगे कि वह अपने परिवार से कटी हुई है तो उसकी इस टूटी कड़ी को जोड़ने का प्रयास करो। जैसे तुम मुझे पत्र लिखती हो, उससे भी कहो, अपनी माँ को पत्र लिखे। अपने घर की, भाई-बहनों की बातों में रुचि ले। अपनी समस्याओं पर माँ से खुलकर बात करे और उनसे सलाह ले। यदि उसकी माँ इस योग्य न हो तो वह अपनी बड़ी बहन या भाभी से निर्देशन ले। यह भी संभव न हो तो अपनी किसी समझदार सहेली या रिश्तेदार को ही राजदार बना ले। घर में किसी से भी बातचीत का सिलसिला जोड़कर वह अपनी समस्या से अकेले जूझने से निजात पा सकती है। नहीं तो तुम तो हो ही।

ऐसे समय वह तुम्हारी बात न सुने, तुम्हें झटक दे, तब भी उसकी वर्तमान मनोदशा देखकर तुम्हें उसकी बात का बुरा नहीं मानना है। उसका मूड देखकर उसका मन टटोलो और उसे प्यार से समझाओ।

एक शुभचिंतक सहेली के नाते ऐसे समय तुम्हें उसे इसलिए अकेला नहीं छोड़ देना है कि वह तुम्हारी बात नहीं सुनती या तुम्हारी बात का बुरा मानती है। तुम साथ छोड़ दोगी तो वह और टूट जाएगी। अकेली पड़कर वह उधर ही जाने के लिए कदम बढ़ा लेगी, जिधर जाने से तुम उसे रोकना चाहती हो। यहीं पर तुम्हारे धैर्य और संयम की परीक्षा है।

अगर जरूरी समझो तो सहेली के कथित दोस्त या प्रेमी लड़के से भी किसी समय बात कर सकती हो। उसकी मनशा जानकर उससे अपनी सहेली को अवगत करा सकती हो या आगाह कर सकती हो।

यदि तुम्हें लगे कि लड़का निर्दोष है, निश्छल है, अपने प्यार में सच्चा या अडिग लगता है तो दोनों को पढ़ाई के अंत तक प्रतीक्षा करने और तब तक केवल दोस्त बने रहने का परामर्श दे सकती हो।

पर यहाँ भी तुम्हें सतर्कता बरतनी होगी। रचना को विश्वास में लेकर दोस्ती के दौरान उससे कोई गलत कदम न उठाने का वायदा लेना होगा, वरना दूसरों की आग बुझाते अपने हाथ जला लेना कोई अनहोनी या असंभव बात नहीं। इसीलिए मैंने कहा है, यह तुम्हारी सूझ-समझ की भी परीक्षा होगी।

मैं इसके परिणाम की प्रतीक्षा करूँगी। अगले पत्र में जानकारी देना। दोगी न!

—तुम्हारी माँ

❑

उम्र की दहलीज पर दोस्ती का पहला कदम

सुनो सुगंधा!

तुमने लिखा है, तुम्हारी सहेली रचना ने अपने उस दोस्त या कथित प्रेमी के साथ मिलना-जुलना बिलकुल बंद कर दिया है। पर उसने तुम्हारी सलाह मानकर उससे मेल-जोल बंद नहीं किया, उस लड़के को एक अन्य लड़की के साथ 'फ्लर्ट' करते देखकर बंद किया है। इसी बात पर दोनों का झगड़ा हुआ और रचना का 'प्रेम' का बुखार उतर गया। अब वह तुमसे भी कटी-कटी रहने लगी है। इसलिए कि तुमने उसकी कथित दोस्ती की बात अपनी दूसरी सहेली अदिति को बता दी थी।

वही हुआ न, जिसका मुझे डर था।

इस कच्ची नासमझ उम्र में अकसर ऐसा ही होता है। सोच-समझकर निर्णय नहीं लिये जाते। लिये ही नहीं जा सकते। जब तक घर से ऐसा परिवेश या प्रशिक्षण न मिले या समय पर कहीं से ठीक दिशा-निर्देशन न मिल सके, प्राय: प्रथम संपर्क में ही किशोर कदम भटक जाया करते हैं।

देखो सुगंधा, भावुक नासमझ लड़कियाँ जिसे 'पहली नजर का प्यार' समझ लेती हैं, वह वास्तव में प्यार नहीं, केवल विपरीतलिंगी के प्रति आकर्षण भर होता है। एक खुमार, जो यथार्थ की धरती से टकराते ही उतर जाता है। रह जाता है केवल गुबार—'हाय! सब सपने बिखर गए।'

लड़की एक झटके में ही टूट जाती है। निराशा, उदासी से भर अपना सब दैनिक काम-काज भूलकर, लगभग निष्क्रिय-सी बैठ जाती है। या फिर कहीं माँ-बाप ने सख्ती से अलग कर दिया तो आक्रोशी-विद्रोही बन पूरे-के-पूरे समाज को कोसने लगती है—'हाय! यह क्रूर, निष्ठुर समाज उन्हें एक नहीं होने देता।' आदि।

पर ये दोनों ही स्थितियाँ न वास्तविक होती हैं, न स्थायी। खुमार उतरने पर एक डूब, एक ठहराव के बाद अकसर उन्हें अपनी करनी पर स्वयं ही पछतावा होने लगता है। या घटना के बाद की अपनी तात्कालिक भावुक प्रतिक्रिया उन्हें मूर्खतापूर्ण लगने लगती है—'हाय! कितनी मूर्ख थी न मैं। मामूली सी बात को मैंने कितने गंभीर रूप में ले लिया था। लड़का तो वैसे ही गुलछर्रे उड़ाता रहा, मैं ही क्यों उसके पीछे यूँ बावली हो गई थी। नुकसान किसका हुआ?जगहँसाई व बदनामी मेरी ही न?लड़के का क्या बिगड़ा? अच्छा हुआ, मैं जल्दी सँभल गई, वरना...' आगे कुछ सोचकर मन खराब करने के बजाय अब वह उस प्रसंग पर बात तक नहीं करना चाहती।

अगर रचना की मन:स्थिति भी इस स्तर तक पहुँच गई है तो उसे लेकर तुम्हें चिंतित होने की कतई जरूरत नहीं। प्राय: ही लड़कियों के साथ ऐसा होता है। किशोरावस्था के सौ-सौ कसमें, वादे भूलकर वे वापस अपने घर, माँ के या ससुराल में रच-बस जाती है, क्योंकि उस उम्र में न उन्हें प्यार की समझ होती है, न उसे लेकर वे इतनी गंभीर हो पाती हैं। इसलिए समझ आने पर अकसर सँभल जाया करती हैं। अपवाद हो सकते हैं, पर आम तसवीर यही है।

घटना के बाद जैसे ही वे चेतन अवस्था में आ पाती हैं, उन्हें नया बोध होता है कि समय पर भंडाफोड़ हो जाने से एक धोखेबाज प्रेमी से समय रहते बच गई, वरना पति बनकर वह न जाने क्या करता?...या कि माता-पिता ठीक ही कहते थे। समय पर उन्होंने सख्ती से न रोका होता तो न जाने क्या होता?

मैं यह नहीं कहती कि हर मामले में ऐसा होता है, पर अकसर यही होता है। आगे चलकर अपने आस-पास के मामलों को देखते-सुनते तुम अपने अनुभव से स्वयं ही सब जान जाओगी। अभी एकदम घटना के आर-पार देखना शायद तुम्हारे लिए संभव नहीं होगा।

इसीलिए मैंने अपने पिछले पत्र में तुम्हें लिखा था—'तुम्हारी सहेली रचना के मामले को सुलझाने में तुम्हारी सूझ-समझ की भी परीक्षा होगी।' ठीक लिखा था न मैंने?

हाँ सुगंधा, उम्र की इस दहलीज पर किशोरियों के लिए यह पहला परीक्षा-काल होता है। जिंदगी में आगे आनेवाली कई परीक्षाओं में सफल होने की राह यहीं से निकलती है कि कोई किशोरी प्रेम और दोस्ती को किस अर्थ में लेती और निभाती है? रचना ने गलती की, कॉलेज में बने अपने पहले ही दोस्त को, उसकी दोस्ती को जाने-परखे बिना, उसे प्रेमी समझ लेने की।

इसके बाद उतावली में आगे बढ़ने की। फिर एक झटके में ही टूट-बिखरकर अलग हो जाने की। और इस टूट की चोट को सह न पाने पर हताशा में डूब अपना आपा खो बैठने की। अगर वह धीरे-धीरे आगे बढ़ती, यानी कम मेलजोल रखकर, कभी-कभी विचारों के आदान-प्रदान से उसे जानती-परखती तो ऐसा न होता। उससे अकेले में मिलने की जल्दबाजी दिखाने का ही यह नतीजा है कि उसे गहरा झटका लगा और वह टूट गई। इतनी कि इस सदमे से जल्दी उबर नहीं पाई। अपनी पढ़ाई का तो नुकसान किया ही, अपनी अंतरंग सहेली तक से कतराने लगी।

पर यहाँ तुम जरा अपने को टटोलो तो! तुम भी अपनी परीक्षा में सफल कहाँ रहीं?

रचना की अंतरंग सहेली के नाते अपना फर्ज निभाने की तुमने भी कहाँ परवाह की?उसे सँभलने का मौका दिए बिना, वक्त पर उसे सँभालने की जिम्मेदारी निभाए बिना, उसके गुप्त संबंध की बात दूसरी सहेली से कहकर क्या तुमने उसका दिल नहीं तोड़ा? उसका राज जग-जाहिर कर तुमने भी तो उसका विश्वास भंग किया है, इसलिए ही अब वह तुमसे कतराने लगी है।

देखो बेटी, हम कितने भी सही हों, सामनेवाला कितना ही गलत, यह मानना होगा कि कमोबेश हर व्यक्ति की अपनी कमियाँ भी होती हैं, अपनी सीमाएँ भी; चाहे वे परिवेश की ही देन क्यों न हों! पर जब हम किसी को मित्र या दोस्त कहते हैं तो उसकी कमियों-खूबियों के साथ ही उसे स्वीकारना होता है। कोई भी दोस्त यह पसंद नहीं करेगा कि उसकी कमियों का या उससे हुई गलतियों का विज्ञापन किया जाए। इसलिए तुम्हारी सहेली रचना की नाराजगी जायज है। तुम्हें अपनी यह भूल स्वीकारनी होगी।

माना कि रचना की कुछ आदतें ठीक नहीं हैं और उसने कोई गलत काम किया है, तुम्हारे मना करने के बावजूद। पर उस गलत काम का ढिंढोरा पीटना न तो मित्रता के दायरे में आता है, न गलती-सुधार की प्रक्रिया में ही सहायक होता है। हाँ, बात को और बिगाड़ जरूर सकता है। दोस्त की कमियों-गलतियों को लगातार बरदाश्त करना समझदारी नहीं, तो यह भी कहाँ की समझदारी है कि 'वह बात नहीं सुनती तो भुगते' कहकर बिगड़ी को और बिगड़ने दिया जाए और जब सँभालने का वक्त आए तो टूटे दिल को एक और ठोकर मार उसे और तोड़ा जाए। मेरा आशय तुम समझ रही हो न?

इसका मतलब यह भी नहीं कि तुम रचना की उस गलती की तरफ से आँखें मूँद लेतीं। मित्रता का उद्देश्य समय पर सही सलाह देना होता है तो विपत्ति के समय उसे सहारा देना भी। यहाँ तुम्हारा यह तर्क नहीं चलेगा कि उसने सलाह नहीं मानी तो परिणाम भुगते, सहारा देना अब तुम्हारा काम नहीं।

नहीं सुगंधा, यहीं तुम्हारी दोस्ती की परीक्षा थी कि रचना की नाराजगी के बावजूद ऐसे वक्त तुम उसे सहारा देने से पीछे न हटतीं। तब वह तुम्हें सच्ची हमदर्द समझकर, न केवल दु:ख से उबर जाती, आगे कभी तुम्हारी बात न टालती। अपनी अन्य सहेलियों के बीच लज्जित होकर ही वह तुमसे कटी-कटी रहने लगी है। अब भी अपनी गलती सुधारकर, उससे क्षमा माँग लो, तो वह फिर से तुम पर निछावर होने लगेगी।

अगर ऐसे वक्त तुमने उसे नहीं अपनाया तो वह हताशा में डूबकर अपनी पढ़ाई से मुँह मोड़ सकती है। अपने व्यक्तित्व की, अपने कैरियर की हानि कर सकती है। नहीं तो क्रोध में भरकर बदले की भावना पर उतर सकती है। तब कोई अपराध कर सकती है या पुरुषों से बदला लेने के लिए पहले से अधिक गलत राह पर कदम बढ़ा सकती है।

मेरे खयाल से अगर तुम्हें उससे जरा भी हमदर्दी है तो तुम कभी नहीं चाहोगी कि उसके कदम अपराध या आत्महत्या जैसी किसी आत्मघाती राह की ओर उठें। तो यही समय है उसकी बात सुनने और उसे सहारा देने का।

तुम उससे मिलो। पहले उसे गुस्से की पूरी भड़ास निकाल लेने दो। फिर जब वह शांत हो जाए तो उसे गले लगाओ, उसे सहारे का आश्वासन दो और आगे कोई गलत कदम न उठाने का वायदा उससे ले लो। अगर अपना अहं छोड़कर तुम यह कर सको तो यह तुम्हारी दोस्ती की अद्‌भुत मिसाल होगी। मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ कि आइंदा वह तुम्हारी होकर रहेगी और तुम्हारी हर बात मानेगी। तुम्हारा अहसान कभी नहीं भूलेगी और तुम्हारे साथ पहले से ज्यादा अंतरंग होकर रहेगी। यही नहीं, तुम्हें स्वयं इससे आत्मसंतोष का सुखद अहसास होगा कि तुमने कोई बड़ा काम किया है।

कई बार जिंदगी की ठोकर ही आगे सँभलने के लिए काफी होती है। फिर वक्त पर सहारा भी मिले तो आगे सँभलकर चलने, कुछ बनकर दिखाने की संभावना काफी बढ़ जाया करती है। तो रचना के इस पुनर्वास व पुनरुत्थान का श्रेय तुम ही क्यों न लो!

एक बात याद रखना बेटी कि रिश्तेदार हम चुन नहीं सकते, मित्र चुन सकते हैं। रिश्तेदार बनाए नहीं जाते, प्राय: बने-बनाए मिलते हैं। उन्हें बदला नहीं जा सकता, हर हालत में उन्हें निभाना होता है। मित्र चुनने, बनाने की हमें स्वतंत्रता होती है। इसी तरह उन्हें बदलने की भी। पर मित्र बनाते समय उनकी परख जरूरी होती है, उन्हें निभाते समय अपनी।

मैत्री-संबंध हर सहपाठी से रखा जा सकता है, पर अंतरंग मित्र बनाते समय उन्हें पहले कुछ समय जाँचना-परखना जरूरी होता है। इसके बाद उन्हें उनके सारे गुणों-दोषों के साथ स्वीकारना होता है और स्वीकार लेने के बाद हर दु:ख-सुख के समय उन्हें निभाना होता है। रिश्तेदारों की तरह निभाना जरूरी नहीं होता, पर मैत्री का तकाजा यही है कि जिसे मित्र मानो, न उसका अहित करो, न किसी को करने दो। मित्र के लिए समय कुछ भी करने-झेलने के लिए तैयार रहना चाहिए—यही मित्रता की मर्यादा है, यही सीमा, यही पहचान।

तुम्हारे भीतर मैत्री की सही पहचान विकसित करने के लिए ही तुम्हारी सहेली रचना के प्रसंग में आज मैं इतना लिख गई।...लड़कों से दोस्ती के संबंध में, उस दौरान मर्यादाओं और सावधानियों के बारे में आगे फिर कभी विस्तार से लिखूँगी—शायद दो-तीन पत्रों में यह विस्तार जाएगा। अभी तो तुम्हारी प्रतिक्रिया जानने के लिए उत्सुक रहूँगी। रचना की मन:स्थिति में बदलाव की सूचनाओं के साथ अपनी पढ़ाई की गति-प्रगति की सूचनाएँ भी अवश्य देना।

—तुम्हारी माँ

❑

यही समय है शरीर-मन के संयुक्त विकास का

सुनो सुगंधा,

तुम्हारा पत्र मिला। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि तुमने रचना से अपने संबंध सुधार लिये हैं और तुम दोनों के बीच फिर वही अंतरंगता लौट आई है।

पर चिंता हुई कि तुम्हारा स्वास्थ्य कुछ ठीक नहीं चल रहा है। तुमने लिखा है—'बुखार, सिर-दर्द आदि कुछ नहीं। पर न जाने क्यों, तबीयत गिरी-गिरी सी लगती है। खाना हॉस्टल का घर जैसा तो नहीं हो सकता, पर सहेलियों के साथ मिलकर खूब डटकर खाती हूँ। फिर भी जैसे खाया-पिया लगता नहीं। पढ़ने-खेलने में स्फूर्ति नहीं। पहले जैसा उत्साह नहीं। कभी मुँहासे निकल रहे हैं, कभी बाल झड़ रहे हैं, कभी आँखों के नीचे कुछ काली झाँइयाँ-सी दिख रही हैं।'

तुमने पूछा है, 'यह सौंदर्य-समस्या है या स्वास्थ्य-समस्या?'

दोनों ही हैं—संयुक्त। जहाँ तक सौंदर्य की बात है, प्राकृतिक रंग-रूप बदला नहीं जा सकता। पर उसे सही साज-सँवार से, सौंदर्य-उपचार से, रहन-सहन के सलीके से निखारा जरूर जा सकता है। यानी सौंदर्य की कमियों को छिपाने और खूबियों को उभारने की कला आनी चाहिए।

पर स्वास्थ्य पर यही बात लागू नहीं होती। उसे छिपाने की नहीं, सही देखभाल से ठीक रखने की जरूरत होती है। यदि कुछ विकार आ जाए तो डॉक्टरी राय व चिकित्सा भी लेनी होगी।

सौंदर्य बहुत कुछ स्वास्थ्य पर भी निर्भर करता है। स्वास्थ्य में कहीं कुछ बुनियादी कमी या खराबी हो तो ऊपरी देखभाल या प्रसाधन से उसे कुछ हद तक ही छिपाया जा सकता है, ठीक नहीं किया जा सकता। **चेहरे की प्राकृतिक लाली, त्वचा की सफाई, बालों की मजबूती, नाखूनों की चमक, शरीर-मन की स्फूर्ति सौंदर्य से संबंधित ये सारी बातें अच्छे स्वास्थ्य की निशानी हैं। और अच्छा स्वास्थ्य संतुलित भोजन पर भी निर्भर करता है, संतुलित सोच पर भी और मन की निश्चिंतता या तनाव-मुक्ति पर भी।** इसलिए इन दोनों बातों पर एक साथ ही ध्यान देना होगा।

इसके लिए डटकर खाना ही काफी नहीं है, खाने का अच्छा पाचन भी होना चाहिए और भोजन में सभी जरूरी तत्त्वों का सही मिलान भी। संतुलित भोजन से ही ये सारी जरूरतें पूरी होती हैं। अब घर पर तो मैं देख लेती थी, तुम्हें क्या देना है, क्या नहीं। वहाँ तुम्हें स्वयं ही देखना है। अपने स्वास्थ्य की स्वयं देखभाल करनी है, तो संतुलित भोजन के बारे में सामान्य जानकारी भी रखनी है।

इसके लिए यह जरूरी नहीं कि इस उम्र में भी तुम कैलोरी गिन-गिनकर खाओ। पर यह जरूर देखो कि हॉस्टल के खाने में तुम्हें सारे पोषक तत्त्व मिल रहे हैं कि नहीं? या जो मिल रहे हैं, कहीं अपनी पसंद की चीजें चुनकर उन्हें तुम छोड़ तो नहीं रहीं?...तुम जरूर ऐसा करती होगी। रोटी, चावल, पसंद की दाल-सब्जी और तली-भुनी, खट्टी-चटपटी चीजें लेकर हरी सब्जियाँ, सलाद, दही आदि छोड़ देती होगी। चाय ले लेती होगी, दूध नहीं। ये मुँहासे निकलना, आँखों के नीचे काली झाँइयाँ दिखना, बाल झड़ना इसी कारण से तो हैं।

देखो, कार्बोहाइड्रेटयुक्त अनाज की चीजों और वसायुक्त घी, मक्खन के साथ प्रोटीन भी चाहिए। प्रोटीन के लिए चने, दालें, अंडा और सामिष भोजन के बदले कभी-कभी थोड़ा पनीर चाहिए। आयरन, कैल्सियम आदि खनिज तत्त्वों-विटामिनों के लिए दूध, दही, फल, हरी सब्जियाँ भी जरूरी हैं।

अनाज, घी-मक्खन आदि चीजें शरीर में दैनिक कामकाज की शक्ति बनाए रखने के लिए जरूरी हैं। प्रोटीन शरीर की बढ़त और भीतर की दैनिक टूट-फूट की मरम्मत के लिए चाहिए। इसी तरह शरीर में खनिज-विटामिनयुक्त हरी सब्जियों आदि की जरूरत बीमारियों से बचाव तथा सौंदर्य के निखार के लिए होती है। हर रोज खुराक में ये सारी चीजें मिलकर ही संतुलित भोजन की जरूरत पूरी करती हैं। इसलिए एक वक्त के भोजन में नहीं, तो पूरे दिन के भोजन में ये सारे तत्त्व होने चाहिए।

अगर हॉस्टल के खाने में हरी सब्जियाँ कम मिलती हैं तो तुम सब छात्राएँ मिलकर इसकी माँग करो और साथ में मिलनेवाला सलाद जरूर खाओ। फल तुम स्वयं खरीदकर खा सकती हो। दूध-दही जितना मिलता हो, उसे जरूर सेवन करो। कुछ दिनों में ही तुम्हें अपने स्वास्थ्य में फर्क मालूम होगा और ये सौंदर्य-समस्याएँ भी रफूचक्कर हो जाएँगी।

पर इसके लिए एक तो तुम्हें बाजार से चाट-पकौड़ी, समोसे-कचौड़ी आदि खाने का लालच छोड़ना होगा। कभी-कभी सहेलियों के साथ मिलकर खा लेना और बात है, आदत बना लेना और। अगर वहाँ जाकर यह आदत डाल ली है तो इसे बदलो।

भुने चने, मूँगफली, भुट्टा, खीरा-ककड़ी, सभी मौसमी फल आदि खरीदकर खाओ तो कम खर्च में भी सेहत बनेगी। इसके साथ सैर-व्यायाम, खेल-कूद जारी रखो, जिससे कि खाया-पिया पचे और शरीर को लगे। त्वचा की सफाई पर भी पूरा ध्यान दो। पत्तेदार भाजियाँ और फल-सलाद खाने से कब्ज नहीं होगी और त्वचा साफ चमकदार होकर निखरेगी। मुँहासे नहीं निकलेंगे, झाँइयाँ दूर होंगी और बाल झड़ना बंद हो जाएँगे।

किशोरावस्था में शारीरिक विकास को गति तीव्रतम होती है। ऐसे में लड़कियों को अतिरिक्त पोषण की आवश्यकता होती है। १३ से १९ साल की उम्र के दौरान, जब किशोरियों का शरीर माँ की भावी भूमिका के लिए तैयार हो रहा होता है, पोषण की कमी उनकी सेहत पर बुरा असर डाल सकती है। मेडिकल अनुसंधान परिषद् की सिफारिश के अनुसार, एक किशोरी को उतना ही भोजन चाहिए जितना कि एक वयस्क महिला को।

इस उम्र में शारीरिक-मानसिक परिवर्तन व विकास साथ-साथ घटित होते हैं। सही जानकारी के अभाव में किशोरियाँ अकसर इन प्राकृतिक परिवर्तनों को समझ नहीं पातीं तो परेशान हो जाती हैं। उनकी परेशानी का कारण अकसर उनके अपने शरीर में उभरते लक्षण ही होते हैं। ये हैं —

- कद का तेजी से बढ़ना।
- स्तनों में उभार आना।
- चरबी बढ़ने के कारण वजन बढ़ना।
- बगलों और जननांगों में बाल उगना।
- नर्वसनेस के कारण ज्यादा पसीना आना।

इन्हीं शारीरिक-मानसिक-भावनात्मक परिवर्तनों से किशोरियों के भीतर एक ओर विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण बढ़ता है, दूसरी ओर उनके भीतर आज़ादी की इच्छा करवट लेने लगती है। पर अभी वे न तो बालिका हैं, न वयस्क ही हो पाई हैं। बच्चों, बड़ों दोनों से ही अलग-थलग जा पड़ने के कारण ही वे सहेलियों-दोस्तों के साथ हो लेती हैं, पर सुरक्षा की दृष्टि से की गई रोक-टोक उन्हें परेशान कर देती। उनकी कच्ची समझ पर विश्वास न किए जाने पर भी वे खीझने लगती हैं। आखिर वे क्या करें? किससे अपने मन की व्यथा कहें? इन परेशानियों का असर मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ता है तो समस्याएँ ज्यादा उभरती हैं। इसलिए शरीर के साथ मन को भी सँभालना होगा।

किशोरी की मानसिक पसोपेश का मुख्य कारण उसकी यह भीतरी उलझन ही होती है। ऐसे समय उसे घर से सही दोस्ताना दिशा-निर्देश न मिले तो वह हमदर्दी पाने के लिए दोस्त खोजती है। और यहीं सही दोस्त न मिलने से वह धोखा खा सकती है, शोषण की शिकार हो सकती है।

ऐसे समय उसे घर से सही देखभाल भी चाहिए, सही भोजन के साथ सही परवरिश भी। बढ़ती उम्र की माँग और इस भीतरी क्षति-पूर्ति के लिए ही उसे आठ-दस वर्ष के बच्चे से अधिक वयस्क महिला जितनी कैलोरी और पौष्टिकता चाहिए। एक औसत किशोरी की दैनिक आवश्यकता होगी, प्रतिदिन २२०० कैलोरी ऊर्जा, ५० ग्राम प्रोटीन और भोजन में भरपूर लौह, कैल्सियम तथा विटामिन—विशेष रूप से विटामिन 'ए' और 'सी'। इस जरूरत के लिए केवल जानकारी और इस ओर जागरूकता चाहिए, महँगा भोजन नहीं।

पर जागरूकता का अर्थ इधर हमारी भारतीय किशोरियों ने भी गलत ही लगा लिया है। पहले तो वे सहेलियों के साथ गपशप करते हुए, टी.वी. देखते हुए साथ-साथ कुछ-न-कुछ खाती रहेंगी या कैंटीनों, रेस्त्राँओं में जाकर 'फास्ट फूड' की माँग करेंगी और फिर मोटापा आता दिखे तो सौंदर्य के लिए, छरहरे 'फिगर' के लिए एकदम खाना कम कर देंगी।

पिछले कुछ समय से ब्यूटी कंपिटीशनों के प्रचार-प्रसार व उनमें भारतीय युवतियों की जीत ने किशोरियों के मन में ब्यूटी क्वीन के रोल मॉडल फिट कर दिए हैं और वे स्वयं इसी चक्कर में पड़कर सच्चे-झूठे सपने देखते हुए, वैसा बनने की कोशिश में लगी रहती हैं।

जरूरी नहीं कि वे स्थानीय कंपिटीशनों के लिए स्वयं को तैयार कर रही हों, अपनी मित्र मंडली पर अपना प्रभाव जमाने के लिए भी इस प्रक्रिया को अपना लेती हैं। अब उन्हें इतनी समझ तो होती नहीं कि छरहरा दिखने के लिए कम खाना जरूरी नहीं, सही-संतुलित खुराक लेना जरूरी है। नतीजा होता है, अ-पोषण व कुपोषण, जिसका अगला परिणाम होता है, स्वास्थ्य संबंधी गड़बड़ियाँ व कमियाँ और सौंदर्य संबंधी अनेक समस्याएँ।

सन् १९९६-२००० के दौरान कई देशी-विदेशी संस्थानों द्वारा किए गए सर्वेक्षणों से यह तथ्य सामने आया है कि मीडिया द्वारा छरहरी शारीरिक छवि को निरंतर प्रोत्साहन देने के कारण किशोरियों में यह अतिरिक्त जागरूकता आई है, जो इस कदर कहर ढा रही है। इसलिए पहले कुछ भ्रमों का निवारण जरूरी है, फिर घर-बाहर से किशोरियों को इस संबंध में उचित निर्देशन देना कि कुपोषण से भावी माताओं की हड्डियों और मांसपेशियों को हानि न पहुँचे।

पौष्टिकता का मतलब मोटापा बढ़ानेवाली तली-भुनी, भारी, गरिष्ठ चीजें नहीं, प्रोटीन-खनिज-विटामिन से भरपूर भोजन होता है, जिससे शक्ति मिलती है, बढ़त में बाधा नहीं पड़ती और बीमारियों से बचाव होता है। सही संतुलित भोजन कैसे स्वास्थ्य व सौंदर्य दोनों के लिए समान रूप से उपयोगी है, यह पहले बताया ही जा चुका है।

इसके लिए कैलोरी गिनने या तत्त्वों के मिलान पर सिर खपाने की जरूरत नहीं। केवल कुछ सामान्य बातें समझ लेना ही पर्याप्त है। किशोरियों के लिए ही नहीं, आगे ये सही आदतें पूरे स्त्री-जीवन में भी काम आएँगी। अच्छा हो, इन्हें एक डायरी में नोट कर लिया जाए।

हॉस्टल जीवन में सामूहिक व्यवस्था से इसमें कुछ हेर-फेर स्वीकार किया जा सकता है, इसके साथ कुछ अतिरिक्त व्यवस्था भी सोची जा सकती है, जैसे कि मैंने पहले तुम्हें कहा कि तुम कुछ लड़कियाँ मिलकर प्रिंसिपल से उसी तरह नियमित भोजन-मेन्यू में भी जरूरी परिवर्तन की माँग उठा सकती हो (बशर्ते कि कमी पूर्व मेन्यू में हो), जिस तरह परीक्षा के दिनों में सभी लड़कियों के मेन्यू में जरूरत के अनुसार परिवर्तन कर लिया

जाती है या किन्हीं लड़कियों के लिए मासिकधर्म के दिनों और उनकी बीमारी के दौरान विशेष भोजन की व्यवस्था कर दी जाती है। पर सामान्य नियम तो सबके लिए ये ही स्वीकार्य होंगे—

● वजन कम रखने के लिए कहने के बजाय, कहूँगी, ठीक रखने के लिए, भूखा रहना कतई जरूरी नहीं। इससे कमजोरी आएगी व बीमारियाँ घेरेंगी। इसके बजाय भोजन ऐसा लेना है कि भरपेट खाकर भी मोटापा न बढ़े। जैसे —चॉकलेट, मिठाई, फास्ट फूड आदि कम लेकर भोजन में दूध-दही, हरी सब्जी, सलाद, ताजे फलों की मात्रा बढ़ाना। भोजन से पहले सलाद लेने की आदत डालने से रोटी-चावल जैसी कार्बोहाइड्रेट-युक्त चीजें स्वयं ही कम खाई जाएँगी। पेट भी भरा रहेगा, पोषण की कमी भी नहीं होगी और वजन भी नहीं बढ़ेगा।

● हमेशा कुछ-न-कुछ खाते रहने की आदत छोड़कर नियमित रूप से निश्चित समय पर ठीक से खाएँ। कभी विशेष कारण से ही इस नियम में छूट लें तो पेट ठीक रहेगा, वजन संतुलित रहेगा। न बीमारी घेरेगी, न आलस या सुस्ती।

● अधिक मिर्च-मसालेवाला तला-भुना, गरिष्ठ भोजन कभी किसी पार्टी में या छुट्टीवाले दिन ही लेने की आदत डालें और उस दिन एक समय का सामान्य भोजन छोड़ दें। वैसे भी रख सकें तो सप्ताह में एक दिन का उपवास रखने से लाभ होगा।

● दोनों समय के भोजन में से अपनी सुविधानुसार एक समय का भोजन हलका रखें, दूसरे समय का भरपूर पोषण देनेवाला। कामकाजी युवतियाँ व छात्राएँ दिन का भोजन हलका रखें तो उन्हें लाभ होगा। पर जिन्हें रात को देर तक पढ़ना हो, उन्हें रात को हलका भोजन लेना चाहिए।

● नाश्ते में चाय की जगह दूध लें। शरीर में चरबी ज्यादा हो, कम करनी हो तो बदले में सप्रेटा दूध या छाछ लेनी चाहिए।

● बाहर खाना पड़े तो चाट-पकौड़ी, छोले-भटूरे, समोसा-कचौड़ी की जगह इडली, प्लेन डोसा, ढोकला, उपमा का चुनाव उपयुक्त रहेगा।

● क्रीम, सॉस, स्प्रैइस की जगह देसी चटनी को प्राथमिकता दें।

● न अधिक ठंडे पेय लें, न तेज गरम चाय ही। दाँतों की सुरक्षा व खूबसूरती के लिए यह जरूरी है कि ज्यादा शीत-गरम वस्तुएँ न ली जाएँ। यहाँ तक कि पानी भी खूब ठंडा न पिया जाए। पर पेट साफ रखने व त्वचा की सुंदरता के लिए दिन भर में दस-पंद्रह गिलास पानी जरूर पीना चाहिए।

● सब्जी-सलाद-फल लेने व पर्याप्त मात्रा में पानी पीने पर कब्ज नहीं होती और मुँहासों सहित त्वचा संबंधी समस्याओं का समाधान होता है। फिर भी कब्ज हो तो रात को सोते समय ईसबगोल की भूसी लें। पर ध्यान रहे, भोजन-सुधार ही करना है, ईसबगोल या कायम चूर्ण जैसी रेचक चीजों की आदत नहीं डालनी है।

● कोला जैसे शीतल पेय कम-से-कम लें, क्योंकि इनमें कार्बन डाइ-ऑक्साइड रहता है, जो मुँह में जाकर अम्ल में बदल जाता है और दाँतों के एनेमल को नुकसान पहुँचाता है। विकल्प के रूप में लस्सी प्रोटीन, कैल्सियम, फॉस्फोरसयुक्त होने से लाभकारी रहेगी।

● अंत में एक जरूरी बात यह कि किसी कारण वजन अधिक हो और कम करना जरूरी लगे, तो किसी विशेषज्ञ की देख-रेख में ही करें कि कमजोरी या एनीमिया की शिकार होकर भीतरी रोग-प्रतिरोधक शक्ति ही न कम कर लें।

मैं जानती हूँ सुगंधा, तुम्हें भोजन संबंधी इतनी सारी हिदायतों की अभी एकदम जरूरत नहीं। फिर भी ये सारी सामान्य बातें एक डायरी में नोट करके रख लेने से कभी भी तुम्हारे या किसी अन्य के भी काम आ सकती हैं। अपने लिए तो यह डायरी जीवन भर की निधि बनकर रहेगी ही। आखिर में इस बात को मैं फिर दोहरा रही हूँ कि पतला-छरहरा बदन होना किसी भी किशोरी के लिए अच्छी बात है, पर यह 'फिगर' स्वास्थ्य की कीमत पर प्राप्त करना बुद्धिमानी नहीं। फिर वही बात कि संतुलन हर जगह, हर बात में चाहिए।

बस, आज इतना ही। पत्र पहले ही लंबा हो गया है। इसलिए सौंदर्य संबंधी अन्य सुझाव अगली बार।लिखना कि अब स्वास्थ्य कैसा है?स्फूर्ति लौटी कि नहीं?

—तुम्हारी माँ

❑